

स्वामी मुक्तानन्द के वचनों पर ध्यान

ईस्टर के उपलक्ष्य में सिद्धयोग सत्संग

ईशा सरदेसाई द्वारा लिखित

समापन-विचार

इस वर्ष, २०२६ के जनवरी माह से मैं सिद्धयोग सत्संगों से श्रीगुरुमाई और बाबा मुक्तानन्द की सिखावनियों पर 'ध्यान' के ये लेख लिखती आई हूँ। और इससे पहले भी, पिछले कई वर्षों से अलग-अलग सन्दर्भों में मैंने सिद्धयोग पथ की वेबसाइट के लिए श्रीगुरु की सिखावनियों के विषय पर लिखा है। तथापि, आज भी मुझे उतना ही आश्चर्य होता है, यह देखकर कि इन सिखावनियों में कितना ज्ञान समाया हुआ है—सीखने, खोज करने और समझने के लिए इनमें कितना कुछ है। इस सबसे अगर कुछ हुआ है तो यह कि मेरे अन्दर जिज्ञासा और विस्मय का भाव बढ़ ही गया है। श्रीगुरु के वचनों के साथ मैं जितना अधिक समय व्यतीत करती हूँ, उतनी ही मेरे अन्दर कृतज्ञता बढ़ती जाती है। गुरुमाई जी के वचन, बाबा जी के वचन—ये जीवन भर के लिए आधारभूत पथ-प्रदर्शक हैं। ये मेरे आधार हैं, मेरे जीवन के लिए आधार हैं।

'स्वामी मुक्तानन्द के वचनों पर ध्यान'—चिन्तन-मनन की यह शृंखला, 'चित्शक्ति विलास' के उस उद्धरण पर आधारित रही है जो श्री बेन विलियम्स ने ईस्टर के उपलक्ष्य में आयोजित सिद्धयोग सत्संग के दौरान पढ़ा था। सीधे वीडियो प्रसारण द्वारा, ४ अप्रैल को आयोजित इस सत्संग का शीर्षक था, 'वसन्त के उमंगोत्साह को अपने श्वास में भर लो।' आपने देखा होगा कि मैं इस विषय-वस्तु का उल्लेख बार-बार करती रही हूँ।

जब गुरुमाई जी ने मुझसे कहा कि मैं 'चित्शक्ति विलास' के इस उद्धरण के बारे में लिखूँ तो मुझे लगा कि यह मेरे लिए सम्मान की बात है। उन्होंने मुझे समझाया कि इस उद्धरण में बाबा जी मानव-शरीर और मानव-जीवन के मूल्य के विषय में जो सिखा रहे हैं, उसे समझना हमारे लिए कितना आवश्यक है। मैं इस चुनौती को पूरा करने के लिए उत्साहित भी थी। इस उद्धरण में बाबा जी जो प्रसंग सुनाते हैं, वह बहुत स्पष्ट, संक्षिप्त और सटीक है। मैं यह देखने के लिए उत्सुक थी कि मैं आपके साथ ऐसी कौन-

सी अन्तर्दृष्टियाँ साझा कर पाऊँगी जो आपके लिए नई व उपयुक्त हों, ताकि आपको कहानी से स्पष्ट तौर पर मिलने वाली समझ के अतिरिक्त, चिन्तन-मनन के लिए अन्य दृष्टिकोण भी मिलें।

पाँच भाग लिखने के बाद, मुझे आशा है कि जिस प्रयोजन को लेकर मैंने शुरुआत की थी, उसे मैंने हासिल कर लिया है। मैं पूरे विश्वास के साथ जो कह सकती हूँ वह यह कि बाबा जी के वचन, चिन्तन-मनन के अनगिनत पहलू उजागर करते हैं—ऐसे असंख्य प्रश्न प्रस्तुत करते हैं जो हम खुद से और दूसरों से पूछ सकते हैं। यहाँ मैंने अपने जो विचार आपके साथ साझा किए हैं, वे बस सागर में एक बूँद के बराबर ही हैं। इसी वजह से, जब मैंने आपमें से अनेक लोगों से सुना और वेबसाइट पर आपने जो टिप्पणियाँ भेजी हैं, उन्हें पढ़ा तो मुझे बहुत खुशी हुई कि आप 'चित्शक्ति विलास' के इस उद्धरण को बार-बार पढ़ रहे हैं, इसके बारे में मेरे विचारों के साथ, अपने विचारों के बारे में भी चर्चा कर रहे हैं। मैं आपको प्रोत्साहित करती हूँ कि भले ही इस विषय पर हमारे सामूहिक अध्ययन का समापन हो जाए, आप बाबा जी के इस माह के दौरान अपनी चर्चा व खोज जारी रखें। बल्कि, अब तो आप सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर इस उद्धरण को अंग्रेज़ी में सुन भी सकते हैं जिसे श्री बेन ने पढ़ा है, साथ ही आप इसके अनुवाद भी पढ़ सकते हैं।

सावधान रहने के लिए मैं आपको एक सुझाव ज़रूर देना चाहूँगी। यद्यपि श्रीगुरु के वचनों में असीमित ज्ञान निहित है, तथापि यह आवश्यक नहीं है कि इन सिखावनियों के विषय में हमारे मन में उभरने वाला हरेक विचार सहायक ही हो। चिन्तन-मनन और लगातार सोचते रहने में फ़र्क है।

चिन्तन-मनन हमें हितकारी दिशा में ले जाता है, यह हमें एक लाभप्रद निष्कर्ष तक पहुँचाता है—और सिद्धयोग पथ पर इसका अर्थ है कि चिन्तन-मनन हमें अपने 'जीवभाव' और 'आत्मा' की समझ के निकट ले आता है। दूसरी ओर, लगातार एक ही चीज़ के बारे में सोचते रहना, व्यर्थ ही अपनी ऊर्जा को बर्बाद करना है, वैसे ही जैसे आगे बढ़े बिना, किसी पहिए को एक ही जगह घुमाते रहना। इससे ऊर्जा किसी सार्थक दिशा में नहीं जाती। निश्चित तौर पर, मैं यह नहीं कह रही हूँ कि अब हम सख्ती से अपने विचारों की निगरानी करें या हमारे लिए जो कुछ उभरकर आए, हम उसकी आलोचना करें या इससे पहले कि विचार पूरी तरह से कोई रूप ले लें, हम उन्हें दबा दें। बल्कि मैं तो यह सुझाव दे रही हूँ कि हम इस बात के प्रति सचेत रहें कि हम किन विचारों पर लगातार ध्यान देते हैं, ताकि हमारी साधना को सम्बल मिल सके और जितना हो सके उतनी अच्छी तरह हम अपने समय का उपयोग कर सकें।

इसी तरह, मैंने सावधानी बरतने का प्रयास किया है कि मैं वास्तव में *चिन्तन-मनन* करूँ और उसके बाद ही 'ध्यान' की इस शृंखला के अन्तर्गत अपने चिन्तन-मनन के निचोड़ को जितना हो सके उतने सुस्पष्ट तरीके से आपके समक्ष अभिव्यक्त करूँ। जो मुझे अच्छी तरह जानते हैं, वे इस बात की पुष्टि करेंगे कि मेरे पास किसी भी विषय पर विचारों, कल्पनाओं या मतों की कमी नहीं होती। और फिर यहाँ तो हम एक विशिष्ट विषय पर चर्चा कर रहे हैं, यानी शरीर पर। यह एक नाजुक विषय है जिसकी ओर हमें विचारपूर्वक बढ़ना होगा, कम-से-कम इतना तो कह ही सकते हैं कि यह एक ऐसा विषय है जिस पर हम आम तौर पर निष्पक्ष होकर बात नहीं कर पाते। हम सबके पास शरीर है और अपने-अपने शरीर को लेकर हमारे अपने-अपने विचार हैं। ऐसा नहीं है कि मुझमें यह प्रवृत्ति नहीं है।

परन्तु यही तो है जो इस उद्धरण में बाबा जी के वचनों को अनूठा बनाता है। बाबा जी के वचन हमें प्रेरित करते हैं कि हम शरीर को *अपने से अलग समझें* यानी हम देहभाव से परे हो जाएँ, एक तरह से वे कह रहे हैं कि हम इस शरीर पर जो सांसारिक अपेक्षाएँ थोप देते हैं, उनसे हम इसे आज़ाद कर दें; इसके बारे में हम जो सही-ग़लत मूल्यांकन करते हैं, उन्हें छोड़ दें और जिन तरह-तरह के घमण्डों या दिखावों में हम इसे उलझा देते हैं, उनसे इसे मुक्त कर दें। बाबा जी हमें प्रोत्साहित कर रहे हैं कि हम एक अधिक ऊँचे दृष्टिकोण को अपनाएँ और यह समझें कि शरीर वास्तव में क्या है और यह हमें किस ओर ले जाता है।

A Body Is Divinity Expressed (ABIDE)

शरीर दिव्यता का प्रकट रूप है [वास करना]

[A Body Is Divinity Expressed—इन शब्दों का अर्थ है, 'शरीर दिव्यता का प्रकट रूप है' और इन अंग्रेज़ी शब्दों के पहले अक्षरों से जो लघुरूप शब्द बना है 'ABIDE,' उसका अर्थ है, 'वास करना'।]

'ध्यान' की अपनी पिछली दो शृंखलाओं के 'समापन-विचार' में, मैंने आपके साथ वे Acronym [ऐक्रोनिम] यानी संक्षेपाक्षर या लघुरूप शब्द साझा किए जिनकी रचना मैंने श्रीगुरुमाई की सिखावनियों को याद रखने व अपने अध्ययन को सम्बल प्रदान करने के लिए की थी। जैसाकि मैंने तब समझाया था, श्रीगुरुमाई के कारण ही मैं सीखने और याद रखने के ऐसे स्मृतिसहायक शब्दों [mnemonic devices] की उपयोगिता को समझकर, उनकी सराहना कर सकी हूँ।

'स्वामी मुक्तानन्द के वचनों पर ध्यान,' चूँकि एक ही विषय पर और 'चित्शक्ति विलास' के एक ही उद्धरण पर केन्द्रित रहा है, इसलिए मैंने पूरा प्रयास किया है कि मैं एक ही लघुरूप शब्द बनाऊँ जोकि

उन विचारों को अभिव्यक्त कर सके जिनका हम अन्वेषण करते आए हैं। वह लघुरूप है “A Body Is Divinity Expressed” जिसका अर्थ है, ‘शरीर दिव्यता का प्रकट रूप है’ और इन अंग्रेज़ी शब्दों के पहले अक्षरों से जो लघुरूप शब्द बना है ‘ABIDE,’ उसका अर्थ है, ‘वास करना’। हमने बाबा जी और गुरुमाई जी से सीखा है कि इस शरीर में परमात्मा का वास है। यह शरीर परमात्मा की अनूठी अभिव्यक्ति है। शरीर ही वह माध्यम है जिसके द्वारा हम परमात्मा को जान पाते हैं। इसीलिए बाबा जी द्वारा बताए गए वृत्तान्त में जो सन्त-महामुनि हैं, वे अपने शरीर के प्रति कृतज्ञता के भाव से भर जाते हैं और यही कारण है कि वे यह सुनिश्चित करते हैं कि इस धरती पर अपना समय पूरा होने से पहले वे अपने शरीर को धन्यवाद दें।

गुरुमाई जी ने कई अवसरों पर यह बताया है कि बाबा मुक्तानन्द को भारत के शास्त्र कितने प्रिय थे। तो उनकी इसी बात को सम्मान देते हुए, मैं यह देखना चाहती थी कि ये शास्त्र शरीर के बारे में क्या कहते हैं। स्पष्ट कहूँ तो वे *बहुत कुछ* कहते हैं। और ऐसा वे प्रायः बड़ी ही रचनात्मक व सुन्दर उपमाएँ देकर कहते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण शरीर को एक क्षेत्र के रूप में बताते हैं, एक ऐसे स्थान या भूमि के रूप में जहाँ और जिसके द्वारा मनुष्य भगवद्ज्ञान को प्राप्त करता है।^१ वहीं, कठोपनिषद् में शरीर का वर्णन एक रथ के रूप में किया गया है, जिसकी लगाम है मन, सारथी है बुद्धि और इसे खींचने वाले घोड़े हैं, इन्द्रियाँ।^२

यह एक अद्भुत उपमा है जिसमें इन्द्रियों को *घोड़ों* के रूप में बताया गया है। साथ ही, ‘अश्व के वर्ष’ में यह विशेष रूप से प्रासंगिक भी है। [चीनी राशि चक्र के अनुसार वर्ष २०२६ ‘अश्व का वर्ष’ है] [आपको शायद याद होगा कि हमने ‘ध्यान’ की इन शृंखलाओं में अश्वशक्ति [horsepower] के बारे में चर्चा की है।] अश्वों यानी घोड़ों में अतिशय ऊर्जा व बल होता है। वे धरती पर लगभग किसी भी गन्तव्य-स्थान तक जा सकते हैं। यह घुड़सवारी करने वाले व्यक्ति पर निर्भर है कि वह अपने गन्तव्य को चुने और उस गन्तव्य तक पहुँचने तक, मार्ग पर निरन्तर बने रहने के लिए जिस कौशल व अनुशासन की आवश्यकता है, उनका विकास करे।

इन्द्रियों के साथ भी ऐसा ही है। गुरुमाई जी और बाबा जी ने सिखाया है कि इन्द्रियाँ अत्यन्त शक्तिशाली होती हैं और *निष्पक्ष* भी—कहने का तात्पर्य यह है कि उनकी ऊर्जा किसी एक ही दिशा में आगे बढ़ने के लिए बाध्य नहीं होती। इन्द्रियों की बदलती रहने वाली दिशा व उनकी शक्ति, इन दोनों का यह मेल, अत्यन्त सामर्थ्यशाली है और ऊर्जा का यह भण्डार हमारे अन्दर मौजूद है जो बस किसी दिशा में प्रवाहित होने की प्रतीक्षा में है। जीवन का हमारा अनुभव—और हम इस जीवन में जो हासिल

करते हैं—वह काफ़ी हद तक इस बात पर निर्भर है कि हम इस ऊर्जा को किस ओर ले जाते हैं। हम इसे कहाँ ठहरने देते हैं। हम इसे कहाँ वास करने देते हैं।

‘स्वामी मुक्तानन्द के वचनों पर ध्यान’ की शृंखला के हरेक भाग के समापन पर मैंने पाँच में से एक इन्द्रिय का उल्लेख करते हुए यह बताया कि हम किस प्रकार सार्थक रूप से इसका उपयोग कर सकते हैं। मेरा प्रयास यह था कि मैं आपको—और खुद को—याद दिलाऊँ कि बाह्य रूप से हमारा चाहे जितने भी विषयों से सामना हो जिनकी वजह से हमारी इन्द्रियों की ऊर्जा बाहर की ओर ही खिंचे, बावजूद इसके, हम कोई और विकल्प चुन सकते हैं। हमारी बुद्धि सारथी है; हमारा मन लगाम है। हमारे पास वह क्षमता और चुनने का स्वतन्त्र अधिकार है जिससे हम मृदुलता से उस ऊर्जा को अन्तर की ओर मोड़ सकते हैं, हम इसे अन्तर की ओर ले जा सकते हैं जो कि परमात्मा का निवास-स्थान है। निस्सन्देह, ऐसा करने का एक अद्भुत परिणाम यह होता है कि हमें अपना बाह्य जगत एक नए ही रूप में दिखने लगता है। हम इस जगत के क्रियाकलाप में अब भी भाग लेते हैं, हम अब भी इसका आनन्द उठाते हैं और इसकी सराहना करते हैं, परन्तु अब केवल इसके उतार-चढ़ावों से ही यह तय नहीं होता कि हमारी भलाई किसमें है। हम परिस्थितियों के शिकार नहीं रह जाते।

जैसाकि मैं आपको पहले ही इसकी झलक दे रही हूँ कि ‘ध्यान’ की इस शृंखला के पीछे मेरा उद्देश्य क्या था, मैं आपको कुछ और भी बताना चाहती हूँ। मुझे यकीन है कि आपने इन लेखों के अंग्रेज़ी पृष्ठों पर दिखाई गई हंस की छवि देखी होगी। शायद आपने ध्यान दिया होगा कि हरेक नए भाग के साथ हंस धीरे-धीरे उड़ान भरने की ओर बढ़ रहा है। मुझे यह बताते हुए बहुत खुशी हो रही है कि हंस के उड़ान भरने की कुछ तस्वीरों का आधार वे तस्वीरें हैं जो आप लोगों ने यानी संघम् के सिद्धयोगियों व नए साधकों ने ही खींचकर सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर भेजी हैं।

मैं यह भी समझाना चाहती हूँ कि हंस की छवि क्यों दी गई है। गुरुमाई जी ने सत्संगों में कई बार इस बारे में बताया है कि सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर प्रयुक्त डिज़ाइनों का एक विशिष्ट अर्थ व उद्देश्य होता है। यहाँ भी ऐसा ही है।

भारतीय शास्त्रों में हंस के अनेक प्रतीकात्मक अर्थ हैं। हंस जिन अनेक चीज़ों का प्रतीक है, उनमें से एक है, जीवात्मा जो तब तक एक के बाद एक जन्म लेती रहती है जब तक कि वह साधना द्वारा अन्ततः मुक्त नहीं हो जाती। ‘स्वामी मुक्तानन्द के वचनों पर ध्यान’ में हंस की यह छवि स्वतन्त्रता की ओर होने

वाली इसी क्रमिक प्रगति को दर्शाती है, यानी मनुष्य द्वारा शरीर के माध्यम से 'उसकी' प्राप्ति जो इस शरीर से परे है।

और, एक अन्य कारण भी है कि चिन्तन-मनन की इस शृंखला के लिए हंस की छवि इतनी सटीक, इतनी उपयुक्त क्यों है। बाबा जी को प्रायः 'स्वामी मुक्तानन्द परमहंस' कहकर सम्बोधित किया जाता था। भारतीय परम्परा में 'परमहंस' की यह उपाधि उन आत्मज्ञानी महापुरुषों के लिए प्रयुक्त होती है जो उस स्वतन्त्रता के मूर्तरूप हैं, जिसका हंस प्रतीक है। तो जब मैं यहाँ हंस को देखती हूँ—जब मैं अपने मन में उसकी गति को एक 'फ्लिप-बुक' यानी सचलचित्र की तरह देखती हूँ, जब मैं उसे उड़ान भरते हुए देखती हूँ तो मुझे बाबा जी का स्मरण हो आता है। मेरे मन में विचार आता है कि बाबा जी अपने भक्तों के लिए कौन थे और कौन हैं, और मैं उस धरोहर के बारे में सोचती हूँ जो उन्होंने इस संसार को दी है।

स्वामी मुक्तानन्द के वचनों पर मेरे चिन्तन-मनन पढ़ने और अंग्रेज़ी भाषा में इन्हें सुनने के लिए एक बार फिर से आपको धन्यवाद। जो मैंने लिखा, उस पर अपनी प्रतिक्रियाएँ भेजने के लिए, मैंने जो प्रश्न पूछे उनके उत्तर देने के लिए और बाबा जी की सिखावनियों से जुड़ी अपनी समझ व अपने अनुभव साझा करने के लिए, आपको धन्यवाद। यदि मैं सोचूँ कि कहीं शान्त बैठकर श्रीगुरु के वचनों पर चिन्तन-मनन करने के अलावा ऐसे कौन-से कार्य हैं जिनसे मेरे समय का उपयोग सार्थक रूप से होता है तो मैं पाती हूँ कि ऐसे तो शायद ही कोई कार्य होंगे। परन्तु यदि मुझे चुनना हो तो वह कार्य होगा, इसी तरह, हमारे अपने डिजिटल साधना-सर्कल में, आप सबके साथ, श्रीगुरु के वचनों पर चिन्तन-मनन करना।

चिन्तन-मनन की इस शृंखला का समापन करते हुए, मैं सिद्धयोग पथ पर श्रीगुरुकृपा का आवाहन करने के लिए गाए जाने वाले एक 'शान्तिमन्त्र' के शब्दों व इसके अर्थ को उद्धृत करना चाहूँगी।

ॐ सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।

तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

ॐ । [ज्ञान के इस अध्ययन द्वारा]

हम गुरु-शिष्य की रक्षा हो ।

यह हम दोनों को सँभाले ।

हम दोनों सामर्थ्यवान व ऊर्जावान होकर साथ-साथ कार्य करें।

हमारा ज्ञान तेजयुक्त हो।

हममें कभी एक-दूसरे के प्रति द्वेष न हो।

ॐ। शान्ति। शान्ति। शान्ति।^३

सद्गुरुनाथ महाराज की जय!



© २०२६ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

^१ श्रीमद्भगवद्गीता, १३.१।

^२ कठोपनिषद्, १.३.३-४।

^३ अंग्रेज़ी भाषान्तर © २०२६ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®।